11/6/2020

अस्मिता केन्द्रित विमर्श की अनिवार्यता

B.A - S6
DSE IV

क्रेडिट - 6

डॉ सुनीता कुमारी गुप्ता
हिन्दी-विभाग
मारवाड़ी महाविद्यालय रांची

बड़े पैमाने पर विमर्श शब्द के चलन के साथ ही इसके अर्थ और पर्यायों पर भी पर्याप्त विचार हुआ है। विमर्श शब्द को मुख्यतः DISCOURSE शब्द का पर्याय कहा गया है। कुछ शब्दकोशों में विमर्श का अर्थ DELIBERATION भी बताया गया है। भाषण और प्रवचन के व्यापक अर्थ में 'विमर्श' का उपयोग धार्मिक संदर्भ में होता ही रहा है। लेकिन उत्तर आधुनिक कालखण्ड में विमर्श शब्द का अर्थ संकेत भाषण प्रवचन, बातचीत से आगे निकलकर विशिष्ट वैचारिक स्थापनाओं की चर्चा पर केन्द्रित हो गया है।

दो व्यक्तियों की परस्पर बातचीत भी विमर्श है, लेकिन आज के वैचारिक वैश्विक परिदृश्य में विमर्श का अर्थ उतना भर नहीं है, व्यापक है। शैक्षिक एवं सैद्धान्तिक क्षेत्रों में विमर्श ने धीरे-धीरे एक सांस्कृतिक-सामाजिक पारिभाषिक शब्दावली का रूप ग्रहण कर लिया है। निश्चय ही इस नये संदर्भ में 'विमर्श' शब्द का उपयोग 1980 ई. के पहले नहीं होता था। विलियम फ्लंटक्राफ्ट के 'ए हैंडबुक टू लिटरेचर' (1936) में इस शब्द की प्रयुक्ति का कोई सवाल ही नहीं था। यहाँ तक कि 1976 ई. में प्रकाशित रेमंड विलियम्स की किताब 'की वर्ड्स' में भी विमर्श का पर्याय DISCOURSE शब्द नहीं है। इस शब्द का, इस नए शास्त्र या कि का आविर्भाव 1980 ई. के बाद ही हुआ। मिशेल फूको और फ्रांस

INTECH SYSTEMS
POWER TO EMPOWER

INTECH

ल्योतार ने अपने साहित्यिक सांस्कृतिक अध्ययन को विमर्श की संज्ञा दी। इसके बाद ही विमर्श की व्यापकता सामने आयी। किस बार्कर के अनुसार — "विमर्श ज्ञान की वस्तुओं का बोधगम्य तरीके से परिकल्पना करता है, संरचना करता है, निर्माण करता है तथा तर्क के अन्य तरीकों को अबोधगम्य बनाते हैं।" इस परिभाषा में बार्कर ने विमर्श को एक सामूहिक क्रियाकलाप कहा है। डॉ. सुधीश पचौरी पचौरी ने भी कहा है — "विमर्श अनिवार्यतया सत्ता और ज्ञान के निर्माण की जटिल प्रक्रिया के हिस्से होते हैं, उनकी पूर्वकल्पना करते हैं और वैधता सिद्ध करते हैं।" इस तरह विमर्श ज्ञान के किसी भी क्षेत्र में भाषा व्यवहार के द्वारा सम्पन्न ऐसी प्रक्रिया है जो किसी आर्थिक अथवा उससे भी वृहत्तर समाज में किसी स्थापना के पक्ष / विपक्ष में सम्पन्न की जाती है। पिछले दौर का साहित्यशास्त्र रस या आनन्द को प्रतिष्ठित करता था, जबकि नए दौर का साहित्यकार या साहित्यशास्त्र विमर्शों की चर्चा करता है। इसलिए 'वाक्' पत्रिका को नए विमर्शों का त्रैमासिक कहा गया है। उसके साथ ही नए विमर्शों की परम्परा लगातार उपजती और फैलती जा रही है। आज हिन्दी में कई विमर्शों ने अपनी जगह बना ली है। यह भी सच्चाई है कि इन सभी विमर्शों के पूर्वसूत्र उन्नीसवीं शताब्दी से ही हिन्दी साहित्य में मिलते हैं। अस्तित्व के साथ ही जुड़ी है अस्मिता और इसी के लिए ज़मीन तलाशने की कवायदें और संघर्ष अभी जारी है।

नए विमर्शों की दुनिया में सबसे पहले दलित विमर्श वर्ण-

INTECH SYSTEMS
POWER TO EMPOWER

INTECH

व्यवस्था की असंगतियों के विरूद्ध सामने आया। प्रेमचन्द से प्राप्त दलित चेतना के संकेतों को हिन्दी में मराठी दलित साहित्य की परम्परा में दलित विमर्श के रूप में प्रसार मिला। दलित साहित्य एक ओर उत्पीड़न से उपजे अनुभवों का साहित्य है, तो दूसरी ओर विरोध विरोध-विद्रोह का साहित्य है। इसमें मुख्य रूप से ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, श्योराज सिंह बेचैन, जयप्रकाश कर्दम, कौशिल्या वैसन्त्री, सुशीला टाकभौरे आदि सशक्त कलमकार है। इन्होंने अपने उपन्यासों, कविताओं, कहानियों, आत्मकथाओं और समीक्षाओं के माध्यम से दलित विमर्श को सामने रखा जाता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुसार — "दलित विमर्श में हजारों वर्ष की प्रताड़ना, शोषण, वैमनस्य, द्वेष और भेदभाव से दबा दलित अपनी अस्मिता की खोज के लिए जागरूक दिखाई पड़ता है।" समय के साथ चलते हुए इस दलित विमर्श ने सम्पूर्ण भारतीय समाज और साहित्य में अपनी जगह बना ली है। हिन्दी में दलित साहित्य मनुष्य को सर्वोपरि मानता है। दलित साहित्य के संसार भाषायी, जातीय और प्रान्तीय दुरभिमान नहीं है। निश्चय ही दलित विमर्श की जड़े डॉ. भीमराव अम्बेडकर की विचारधारा को पल्लवित करती है, जिन्होंने वर्ण-व्यवस्था और सामाजिक शोषण की अमानवीय स्थिति के विपक्ष या विरोध में अपनी मान्यताएँ निर्धारित की थीं। बीसवीं सदी के आठवें दशक से हिन्दी में दलित विमर्श गतिविधियों उन्हीं के विचारों का प्रतिफलन है।

नारी-विमर्श और उससे जुड़ी चिन्ताओं पर भी इधर क

INTECH SYSTEMS
POWER TO EMPOWER

INTECH

सारा लिखा गया है, लिखा जा रहा है। भले ही 1792 ई. में ब्रिटेन में महिलाओं के अधिकारों से सम्बन्धित पहला दस्तावेज प्रस्तुत हुआ था, लेकिन 1949 ई. में सिमोन द बोउआ की पुस्तक 'द सेकेंड सेक्स' के प्रकाशन के बाद नारी विमर्श को एक वैश्विक आयाम मिला। इस जमीन पर नारी सशक्तीकरण के कल और आज की परिक्रमा ही समसामयिक नारी-विमर्श का आधार बन गया है। नारी विमर्श का अर्थ ही है नारियों के अधिकार की सुरक्षा और उनकी शक्ति का सबलीकरण। आज हमारे आसपास नारी-विमर्श द्वारा नारी सशक्तीकरण की दिशा में सक्रिय होने के कई मंच हैं। महिला आयोग है, अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस 8 मार्च है अनगिनत महिला संगठन है, कई महिला नीतियाँ हैं, आन्दोलन हैं, और नारे हैं। इन सबके कारण सोच व्यवहार और सृजन के स्तर पर नारी-सशक्तीकरण का स्वर पिछली दो शताब्दियों में बहुत निखरा है। बहुत से क्षेत्रों में नारियों ने आजादी और तरक्की पायी है- लेकिन अभी सशक्तीकरण का सही निम्न साकार नहीं हुआ है। हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श का सूत्रपात करते हुए भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 1874 ई. में ही 'नारि नर सम होंहि' की घोषणा की थी इस देश की सुदीर्घ-सांस्कृतिक परम्परा में नारियों का इतिहास-चक्र कभी सम्मान के शिखर पर चढ़ा है, तो कभी अवनति की खाई में गिरा है। लेकिन भारतीय नारी के मन से अपनी अस्मिता बनाए रखने की चिन्ता कभी विलुप्त नहीं हुई है। व्यक्ति से वस्तु बनने के लिए बार-बार

INTECH SYSTEMS
POWER TO EMPOWER

INTECH

विवश की जा रही नारियों ने अपने सशक्तीकरण के प्रयासों द्वारा वस्तु से व्यक्ति बनने का संघर्ष ही व्यक्त किया है। सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक विपरीतताओं के बीच स्त्री-विमर्श की विचारधारा विभिन्न स्तरों पर व्याप्त है। साहित्य भी इसी कारण अपवाद नहीं है। महादेवी वर्मा, और आशापूर्णा देवी से लेकर प्रभाखेतान, मृणाल पांडे, चित्रा मुद्गल, कुमुद शर्मा, राधा कुमार, सुधा , अनामिका आदि तक नारी विमर्श की आवाज हिन्दी में गूँजती रही है। डॉ० अर्जुन चव्हाण ने ठीक ही लिखा है — "जिस दिन लिंगभेद पर आधारित विषमता और पुरुषी मानसिकता अंतिम सांस लेगी, उसी दिन नारी को अपने अस्तित्व की चिन्ता करनी पड़ेगी और न नारी-विमर्श की पहल करने की आवश्यकता महसूस होगी।" हिन्दी विमर्शों की कतार में अब नारी विमर्श के साथ पुरुष-विमर्श भी शुरू हो गया है।

बच्चों के लिए लेखन की सुदीर्घ परम्परा ने इधर बाल-विमर्श को प्रोत्साहित किया है। चरित्र, संस्कार और विचारों की प्रेरणा के लिए बाल-साहित्य जितना आवश्यक है बच्चों के बारे में विमर्श भी उतना ही प्रासंगिक है। बाल-विमर्श की अवधारणा में धीरे-धीरे बच्चों के नन्हें विश्वासों को बेहतर सामाजिक, वैज्ञानिक, शाश्वत मूल्यों और जानकारियों से लैस करने का संकल्प है। इन दिनों बच्चों के सामने साहित्य और मीडिया द्वारा बहुत कुछ ऐसा परोसा जा रहा है, जो कल्पना और वास्तविकता का मिश्रण होकर भी बच्चों को बेहतर मनुष्य बनने का मार्ग नहीं दिखा रहा है। बाल-विमर्श बच्चों की इसी नींव के निर्माण के लिए यत्नशील है।

INTECH SYSTEMS
POWER TO EMPOWER

INTECH

कच्चों से जुड़े काल-विमर्श के साथ ही इन दिनों वृद्ध विमर्श भी चर्चा में है। जीवन के सन्ध्या-काल में खड़े लोगों के विमर्श-क्रम में प्रेमचन्द की कहानी 'बूढ़ी काकी' का स्मरण अनायास ही हो जाता है। वहीं से हिन्दी में वृद्धों की समस्याओं का वास्तविक आरम्भ हुआ था। इक्कीसवीं शताब्दी के इस दौर में आर्थिक असहायता, सामाजिक-पारिवारिक उपेक्षा, अशक्त-वस्था अक्षमता, रुग्णता और वार्धक्य की अनेकानेक समस्याएँ नए सिरे से उभरकर सामने आई है। ~~डॉ. शिवन~~ डॉ. शिवनारायण के शब्दों में – "वार्धक्य आयु का ऐसा पड़ाव है, जहाँ व्यक्ति शारीरिक मानसिक रूप से शिथिल पड़ने लगता है। ऐसे बुजुर्ग उपेक्षित, तिरस्कृत हो रहे हैं। हमारे बुद्धिजीवियों-रचनाकारों को इस दिशा में चिन्तन-लेखन करना होगा।" वृद्ध विमर्श इसी अवधारणा का विस्तार है।

विमर्श की इस कड़ी में आदिवासी विमर्श अथवा जनजातीय विमर्श भी इन दिनों चर्चा में है। इसका कारण है कि आज भी यह समुदाय उपेक्षित है। आज भी इक्कीसवीं सदी में भी जो सांस्कृतिक श्रेष्ठता और भेद-भाव वाली संकीर्ण हिन्दू-वर्णवादी, नियतिवादी सोच है, वह आदिवासियों को असभ्य और जंगली मानती है। सदा से अपने को श्रेष्ठ मानने वाले आर्यों ने भारत के इन मूल-निवासियों को उर्वर धरती के मैदानों से जंगलों की ओर खदेड़ा है। इन मूल निवासियों को उन्होंने हमेशा अपना शत्रु माना है। बदलते समय में संघर्ष और शोषण को झेलती हुई जनजातियों ने पुराने सपनों की

INTECH SYSTEMS
POWER TO EMPOWER

INTECH

नई चमक के साथ विमर्श के इस नए आयाम में अपनी अस्मिता को उपस्थित किया है। बदलाव की नई दिशा तलाशने से रमणिका गुप्ता, हरिराम मीणा, वीर भारत तलवार, महादेव टोप्पो आदि ने आदिवासी विमर्श को गति दी है।

इक्कीसवीं शताब्दी की दस्तक के साथ ही हिन्दी में विकलांग विमर्श सामने आया है। किसी भी आदमी में जन्म से या दुर्घटनावश आई विकलांगता के पक्ष में जन-जागृति और सहयोगपरक चेतना ने इस नए विमर्श को अभिव्यक्ति दी है। विकलांगों के अनुभव, उनकी व्यथा और त्रासदी को सहानुभूति नहीं, सम्मान और संवेदनात्मक प्रोत्साहन की जरूरत है। इसी मान्यता और धारणा के साथ विकलांग-विमर्श का क्रमशः विस्तार और विकास हुआ है। इसमें कोई शक नहीं कि विकलांगों के प्रशंसनीय अवदान से इतिहास भरा पड़ा है। हर युग में सम्मानित विकलांगों को वर्तमान दौर में भी चिन्तन और लेखन के स्तर पर सम्मान मिले, यही विकलांग-विमर्श का लक्ष्य है।

इतने सारे विमर्शों की दुनिया में हिन्दी-साहित्य हमारे उत्तर आधुनिक काल में एक साथ ही अग्रसर है। समय के साथ विमर्शों की विभिन्न परतें खुली हैं। सिर्फ रंग आने में देर है। विमर्श के इन्हीं प्रसंगों से साम्प्रतिक सृजन को गति एवं विश्वसनीयता भी मिली है।

—x—

डॉ. सुनीता कुमारी गुप्ता
हिन्दी विभाग
मारवाड़ी महाविद्यालय राँ

INTECH SYSTEMS
POWER TO EMPOWER